classmate
Date
Page

DATE: 30/09/2020
CLASS: B.A.(H)
SUBJECT: POLITICAL SCIENCE
PAPER: III (INDIAN GOVERNMENT & POLITICS)
CH: 09 (SUPREME COURT: JURISDICTION)
LECTURE NO. - 23

By,
OM KUMAR SINGH
ASSISTANT PROFESSOR
DEPTT. OF POL. SC.
D.B. COLLEGE, JAYNAGAR
LNMU, DARBHANGA

न्यायिक सक्रियता का मूल्यांकन

न्यायिक सक्रियता के माध्यम से न्यायपालिका ने जहाँ एक ओर राज व्यवस्था में नए आयाम को गढ़ा है, तो दूसरी ओर इसके कुछ निर्णयों ने इसे आलोचना का पात्र बना दिया है।

हाल के कुछ वर्षों में न्यायालय ने न्यायिक सक्रियता का प्रयोग करते हुए जो आदेश जारी किए हैं, उससे प्रतीत होता है कि यह व्यवस्थापिका के नीति निर्धारण की भूमिका निभाने की चेष्टा कर रहा है। आलोचकों के अनुसार, "न्यायाधीशों की प्रचार पाने की भूख ने उन्हें न्यायिक सक्रियता के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया है।"

प्रसिद्ध विधिवेत्ता नानी पालकीवाला न्यायिक सक्रियता पर कड़ी आपत्ति प्रकट करते हुए इसे 'एक तरह की न्यायिक तानाशाही' कहते हैं।

न्यायमूर्ति एच. आर. खन्ना के अनुसार, "न्यायालयों का मुख्य कार्य विवादों का अविलम्ब निबटारा करना है। न्यायालयों ने अपने इस कार्य पर ध्यान न देकर न्यायिक सक्रियता के रूप में जिस स्थिति को अपनाया है, वह स्वेच्छाचारिता है। न्यायालयों की यह स्वेच्छाचारिता न केवल अनौचित्यपूर्ण वरन् तर्क विरुद्ध भी है।"

Scanned with CamScanner

लोकतांत्रिक व्यवस्था के तहत कोई गैर निर्वाचित संस्था नीति निर्धारक निकाय का रूप नहीं ले सकती है। न्यायालयों के कुछ निर्णय मात्र से ही व्यवस्था में मूलभूत परिवर्तन सम्भव नहीं है। जैसा कि 1982 का बंधुआ मुक्ति मोर्चा बनाम भारत संघ के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा दिए गए आदेश का अवलोकन किया जाय तो पायेंगे कि 21 निर्देशों में से किसी भी का पालन नहीं किया गया। यह मामला फरीदाबाद की पत्थर खदानों में काम कर रहे बाल मजदूरों के मूल अधिकारों से सम्बंधित था। इस मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र की यथार्थ परिस्थितियों को ध्यान में न रखते हुए निर्णय दिए थे।

प्राथमिक शिक्षा की अनिवार्यता, बंधुआ मजदूरी का अन्त और बाल श्रम की समाप्ति आदि विषय ऐसे नहीं हैं, जिनके सम्बंध में मात्र न्यायिक निर्णय से लक्ष्य की प्राप्ति हो सके। इन लक्ष्यों की प्राप्ति एक ओर तो जन संघर्ष तथा दूसरी ओर राजनीतिक व्यवस्था के विभिन्न अंगों के विवेकपूर्ण सामंजस्य तथा सहयोग से ही संभव है। अकेली न्यायपालिका इस सम्बंध में कुछ नहीं कर सकती है।

सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय प्रशासनिक व्यवस्था में फैले भ्रष्टाचार को मिटाने के लिए सक्रिय रही है, परन्तु अपने ही अन्दर एवं अन्य न्यायिक संस्थाओं में पाँव पसार रही अथवा व्याप्त भ्रष्टाचार के प्रति पूर्णतः निष्क्रिय है; उदासीन है, जो लोकतंत्र के सेहत के लिए ठीक नहीं है।

उच्च स्तर की न्यायपालिका का न्यायिक सम्मान के प्रति अत्यधिक भावतापूर्ण दृष्टिकोण उचित नहीं है। न्यायालय की अवमानना प्रक्रिया के सम्बंध में

न्यायमूर्ति खन्ना का कथन है कि "उचित रूप में की गई आलोचना स्वीकार की ही जानी चाहिए। न्यायालय-अवमान के अन्तर्गत दण्डात्मक कार्यवाही सकारात्मक आलोचना का उत्तर नहीं है। कुछ सर्वाधिक योग्य न्यायाधीशों ने अपने निर्णयों में इस बात पर बल दिया है कि न्यायालय अवमान की कार्यवाही के प्रसंग में अत्यधिक संयम बरता जाना चाहिए। नागरिकों और प्रेस को न्यायिक प्रक्रिया की सत्यनिष्ठता को परखने का अधिकार होना चाहिए। न्यायपालिका सरकार के प्रत्येक अंग को जवाबदेह बनाना चाहती है, लेकिन स्वयं किसी के प्रति जवाबदेह नहीं होना चाहती है, यह एक प्रकार से न्यायिक निरंकुशता है।

न्यायालय के न्यायिक सक्रियता को जिन आधारों पर आलोचना की जाती है उनमें से अधिकांश के लिए वे जिम्मेवार नहीं है। यदि कार्यपालिका व विधायी संस्थाएँ अपने कर्तव्यों व दायित्व के प्रति जागरूक बनी रहतीं, संविधान के आदर्शों के प्रति आस्था और सार्वजनिक हित व लोककल्याण के प्रति संवेदनशील रहती तो न्यायिक सक्रियता की कोई आवश्यकता नहीं होती अर्थात् न्यायालय ने परिस्थितियों से बाध्य होकर न्यायिक सक्रियता को अपनाया।

जब विधायिका और कार्यपालिका में कई तरह के बुराइयाँ उत्पन्न हो गई। राजनीतिक दल एवं राजनीतिक दल के नेताओं के गलत व भ्रष्ट आचरणों के कारण लोकतंत्र को आघात लगने लगा तो इन संस्थाओं पर से जनता विश्वास उठने लगा। इन स्थिति में न्यायालय के न्यायिक सक्रियता ने राज व्यवस्था के प्रति विश्वास बनाए रखने का कार्य किया है। न्यायिकसक्रियता

के सम्बंध में, जैसा कि अनुभव किया जाता है कि सामान्य जनता के विचारानुसार न्यायिक सक्रियता के प्रकाश को और आगे तक ले जाए जाने की आवश्यकता है। न्यायपालिका ने बहुत अधिक विश्वसनीयता के साथ लोकतांत्रिक व्यवस्था और सार्वजनिक जीवन में नैतिक मूल्यों के प्रहरी की भूमिका निभाई है।'

न्यायपालिका ने न्यायिक सक्रियता के माध्यम से भ्रष्टाचार और अराजकता की हद पार कर रही राजनीति पर लगाम लगाने और उसे पतित होने से बचाने की चेष्टा की है। यदि न्यायिक सक्रियता के माध्यम से देश का नैतिक नेतृत्व न्यायपालिका के हाथ में चला गया है, तो यह दोष व्यवस्थापिका और कार्यपालिका का है न्यायपालिका नहीं।

निष्कर्ष :-

उपर्युक्त वर्णित विवेचना से स्पष्ट होता है कि यदि विधायी व कार्यपालिका संस्थाएँ अपने कर्तव्यों एवं दायित्व से विमुख नहीं होती तो न्यायिक सक्रियता की आवश्यकता नहीं होती। लेकिन न्यायालय की अति सक्रियता भी राज व्यवस्था के लिए उचित नहीं है, इसके लिए एक लक्ष्मण रेखा की आवश्यकता है ताकि सरकार के तीनों अंगों में सामंजस्य व संतुलन बना रहे, तब ही देश प्रगति कर सकता है।

Scanned with CamScanner